शिवरात्रि – आध्यात्मिक पहलू का विवेचन

धर्म और अध्यात्म प्रधान देश भारत में प्रतिदिन कोई-न-कोई उत्सव, जीवन धारा में नई उमंगें, नई लहरें उत्पन्न करता ही रहता है। त्योहारों की इस कड़ी में शिवरात्रि या शिवजयंती का त्योहार सर्वप्रमुख है। इस दिन को हम सर्वात्माओं के पिता, जगत के चैतन्य बीज परमात्मा शिव के सृष्टि पर अवतरित होने की यादगार के रूप में मनाते हैं। कहा जाता है –

'सर्व पर्वों में पर्व महान,
शिव जयंती है सर्व महान।'

कुछ उलझे हुए प्रश्न

भक्तिकाल में जब हम मंदिर में जाते थे तो देखते थे कि मंदिर के मुख्य स्थान पर मुख्य देवता की मूर्ति स्थापित होती है और मंदिर के एक कोने में शिवलिंग भी अवश्य स्थापित रहता है। मन में सवाल उठता था कि मंदिर का मुख्य देवता चाहे श्री राम हो या श्री कृष्ण, श्री शीतला जी हों या श्री दुर्गा जी लेकिन शिवलिंग की उपस्थिति इतनी अनिवार्य क्यों है?

दूसरा प्रश्न यह भी उठता था कि देवी-देवताओं के मंदिर रंग-बिरंगे फूलों से, शीशे के कलात्मक टुकड़ों से, संगमरमर से, सोने अथवा चांदी की पॉलिश से या अन्य सजावटी चीजों से आकर्षक बनाए जाते हैं लेकिन शिवलिंग की स्थापना का स्थान बहुत ही साधारण व सादा होता है। ऐसा क्यों? एक अन्य प्रश्न यह भी उठता था कि घर में यदि कोई साधारण-सा मेहमान आ जाए या हम किसी के यहाँ जाएं या कोई विशेष उत्सव या पारिवारिक स्नेह-मिलन हो तो हम एक-दो का गुलाब, गेंदा या अन्य खुशबूदार फूलों से स्वागत करते हैं, घर की सजावट में भी इन्हीं फूलों को रखते हैं परंतु शिवलिंग पर झाड़-झंखाड़ में उगने वाले रंग-गंध और मूल्यहीन आक-धतूरे के फूल ही चढ़ाये जाते हैं, ऐसा क्यों? यदि मनुष्य का स्वागत आक और धतूरे के फूलों से किया जाये तो शायद वह जीवन-भर के लिए बोलना ही बंद कर दे लेकिन भगवान को यही फूल पसंद क्यों हैं? चौथा प्रश्न यह भी मन में उत्पन्न होता था कि मानव, मानव की ख़ातिरदारी आम, केला, सेब आदि फलों से करता है लेकिन प्रकृति के मालिक भगवान पर साधारण व सस्ते फल बेर चढ़ाए जाते हैं, ऐसा क्यों?

शिव के साथ 'रात्रि' का संबंध

जब हम प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संपर्क में आए और शिव तथा शिवरात्रि के वास्तविक रहस्य को स्वयं भगवान द्वारा ब्रह्मा मुख से सुना तो उपरोक्त सभी प्रश्नों के हल मिल गए और ईश्वरीय कर्त्तव्य को जानकर जीवन को ऊँचा उठाने में बहुत मदद मिली। सबसे पहले तो हमें यह मालूम पड़ा कि शिव के साथ रात्रि शब्द जोड़ने का क्या औचित्य है। किसी बच्चे का जन्म चाहे काली अंधेरी रात में क्यों न हो, उसके निमित्त हर वर्ष मनाए जाने वाले दिन को जन्मदिन ही कहा जाता है, जन्मरात या जन्मरात्रि नहीं। परंतु भगवान के जन्म या अवतरण के साथ रात शब्द का क्या अर्थ है?

परमपिता परमात्मा शिव कहते हैं, हे वत्स, शिवरात्रि में यह जो 'रात' शब्द है, यह बारह घंटे वाली हद की रात का परिचायक नहीं है। यदि मेरा आगमन केवल एक ही रात में होता हो तो कितने ही मनुष्य यह शिकायत करेंगे कि 'प्रभु! उस रात को तो मैं बीमार था या मेरे घर में मेहमान आए थे या मेरे घर में किसी की मृत्यु हो गई थी या मुझे किसी ज़रूरी कार्यवश घर से बाहर रहना पड़ गया था .....तो आप उसी रात में क्यों आए? प्रभु, आप तो हमारी मजबूरियों को जानते थे तो कम-से-कम ऐसी रात में तो आते जब हम थोड़े खाली होते और आपकी आराधना या पूजा कर सकते।' लेकिन हम जानते हैं कि संसार में कोई भी एक रात ऐसी

नहीं हो सकती जिसमें संसार के सब लोग खाली हों। कभी न कभी किसी न किसी को कार्य लगा ही रहता है। इसलिए ईश्वरीय कर्त्तव्य हद की एक रात में संपन्न हो ही नहीं सकता। सब हदों से पार परमात्मा हद की एक रात्रि में कैसे बँध सकता है? अत: 'रात्रि' सृष्टि-चक्र के द्वितीय भाग का परिचायक है। प्रथम आधे भाग को ब्रह्मा का दिन कहते हैं जिसमें सतयुग और त्रेतायुग शामिल हैं और दूसरे आधे भाग को ब्रह्मा की रात्रि कहते हैं जिसमें द्वापर और कलियुग शामिल हैं।

हम यह भी जानते हैं कि जब कोई भी घटना वास्तविक रूप में घटती है तो वह लंबा समय लेती है, जैसे, शादी की तैयारी से लेकर शादी के बाद के रस्म-रिवाज निभाते महीना भर लग जाता है लेकिन वर्षगांठ का उत्सव तो एक-दो घंटे में ही पूरा हो जाता है। इसी तरह बच्चे का जन्म, नामकरण संस्कार और अन्य रस्म अदायगी में लगभग सवा महीना लग जाता है लेकिन जन्मदिन का उत्सव घंटे, दो घंटे में पूरा हो जाता है। भारत की आज़ादी की लड़ाई में भी लगभग सौ साल का अति सक्रिय आंदोलन चला। लेकिन उसके यादगार उत्सव को घंटे, दो घंटे या बारह घंटे तक मनाकर पूरा कर लेते हैं। इसी प्रकार परमात्मा शिव द्वारा सृष्टि को पावन करने का कर्त्तव्य वास्तव में केवल रात-भर नहीं, वर्ष भर नहीं लेकिन लगातार कई वर्षों तक चलता है। ईश्वरीय कर्त्तव्य का यह संपूर्ण काल ही सच्ची शिवरात्रि है। लेकिन भक्तों द्वारा, कई वर्ष चलने वाले ईश्वरीय कर्त्तव्य की यादगार के रूप में केवल एक रात्रि के जागरण और उपवास आदि द्वारा शिवरात्रि मना ली जाती है।

कलियुग को रात की संज्ञा क्यों?

आमतौर पर यह माना जाता है कि रात के अंधेरे का फायदा उठाकर लोग समाज विरोधी काम करते हैं जैसे, चोरी, हत्या, लूट आदि लेकिन कलियुग में तो ये सभी कुकर्म दिन-दहाड़े होते देखे जा सकते हैं। बीच-चौराहे पर सैकड़ों-हज़ारों की उपस्थिति में चोरी, हत्या, लूट, चोरबाजारी, अपहरण, उठाईगिरी, डराना-धमकाना, शोषण, मार-पीट आदि होते रहते हैं और लोग काठ के उल्लू बने देखते रहते हैं। जैसे, सोए हुए आदमी के क्रिया-कलाप जाम हो जाते हैं, वह किसी को सहयोग नहीं दे पाता, ऐसे मानो सारा समाज सोया हुआ है, निर्जीव-सा है जो कुकर्मों का ज़रा भी विरोध नहीं कर पाता। पुलिस की नाक नीचे अपराध हो जाते हैं। सेना के होते आक्रमण और घुस-पैठ हो जाती है। रक्षा-तंत्र का जाल बिछा होने पर भी किसी की भी सुरक्षा कभी भी खतरे में पड़ जाती है। तो ऐसे तमोगुणी समय को दिन होते हुए भी रात का नाम दे दिया गया है और यह उचित भी है।

भगवान का कर्त्तव्य कलियुग में ही क्यों?

कहा जाता है, परिस्थिति पुरुष को जन्म देती है। कलियुग की परिस्थितियाँ ही भगवान के आगमन का कारण बनती हैं। भगवान को हम बिगड़ी बनाने वाला, दु:खभंजन, हरि, पापकटेश्वर, अवढरदानी, मुक्तेश्वर, खिवैया, रहमदिल, कृपालु आदि नामों से जानते हैं। उनके ये नाम हैं तो ज़रूर उन्होंने ऐसा कर्त्तव्य भी किया होगा। जैसे, वकील वहाँ जाता जहाँ झगड़ा हो, डॉक्टर को मान्यता वहाँ मिलती जहाँ बीमारी हो, फायर ब्रिगेड का इंतज़ार भी वहाँ होता, जहाँ आग लग गई हो। इसी प्रकार बिगड़ी बनाने वाले की राह भी तब देखी जाती जब सबकी किस्मत बिगड़ गई हो। दु:ख की अति में ही दु:खभंजन को याद किया जाता है, तो सवाल उठता है कि दु:ख सबसे ज्यादा कब होता है? क्या सतयुग में? नहीं। त्रेता में? नहीं। द्वापर में? नहीं। कलियुग में? हाँ। तो भगवान पाप काटने का, नैया पार लगाने का, दु:ख मिटाने का, ज्ञान-दान से झोली भरने का ..... ये सभी कर्त्तव्य कलियुग के अंत में ही करते हैं। जैसे सूर्य की पहली किरण फूटते ही समय बदल जाता है अर्थात् दिन हो जाता है या दिन उदय हो जाता है, उसी प्रकार भगवान का अवतरण होते ही कलियुग में ही संगमयुग नाम वाले नए युग का प्रारंभ हो जाता है जिसे ज्ञान द्वारा जाग्रत होने वाले ही जान और अनुभव कर पाते हैं।

परमात्मा शिव की शिक्षाएँ

संगमयुग में भगवान शिव काम, क्रोध आदि सभी विकारों की बलि अपने ऊपर चढ़वाते हैं। सोई हुई आत्मा का ज्ञान द्वारा जागरण कराते हैं। मनमनाभव का महामंत्र अर्थात् निरंतर स्मृतिस्वरूप होने की श्रीमत देते हैं और गलत वृत्तियों का मन से उपवास कराते हैं। ईश्वर पिता के इन आदेशों का ज्यों का त्यों पालन करने वाले कलियुगी कखपन को छोड़कर सतयुगी दैवी बादशाही को प्राप्त कर लेते हैं। तन, मन, धन और जन का 100% सुख पा लेते हैं और 21 जन्मों के लिए उनके भंडारे भरपूर हो जाते हैं। आज्ञाकारी बच्चों के भंडारे भरपूर करके, नई दुनिया अर्थात् सतयुग की बागडोर उनके हाथों में सौंपकर परमात्मा शिव स्वयं परमधाम लौट जाते हैं और सृष्टि पर दो युगों तक 100% सुख, शांति और पवित्रता का साम्राज्य स्थापित हो जाता है। परमात्मा शिव के इसी कर्त्तव्य की यादगार के रूप में देवी-देवताओं के मंदिरों को भी बहुत सुंदर तरीके से सजाया जाता है परंतु शिवलिंग साधारण रूप में ही होता है। देवताओं पर बढ़िया खुशबूदार फूल चढ़ाए जाते लेकिन परमात्मा शिव पर विकारों के प्रतीक आक और धतूरे चढ़ाए जाते क्योंकि देवताओं को बनाने वाला परमात्मा शिव ही है।

अर्थ का अनर्थ

कालांतर में द्वापर युग के आरंभ में जब भक्ति मार्ग शुरू हुआ तो संगमयुग पर परमात्मा द्वारा किए गए कर्त्तव्य की यादगार रूप शिवरात्रि मनाई जाने लगी परंतु परमात्मा शिव ने जो शिक्षा दी थी उसके अर्थों का रूपांतरण हो गया। जैसे, एक कहानी सुनाते हैं कि एक मरणासन्न पिता ने अपने पुत्र को बुलाया और कहा कि जीवन में सच्चा सुख प्राप्त करने के लिए हमेशा याद रखना कि दुकान पर अंधेरे में ही जाना और अंधेरे में ही वापिस लौट आना। आज्ञाकारी पुत्र ने पिता की बात की गाँठ बाँध ली। पिता ने शरीर छोड़ दिया, इसके बाद पुत्र प्रतिदिन मुँह अंधेरे उठता, दुकान पर जाता और दुकान को फिर से बंद करके मुँह अंधेरे ही लौट आता। कुछ ही दिनों में पुत्र का दिवाला निकल गया। उसके मन में प्रश्न उठा कि पिता की आज्ञा मानते हुए भी मैं कंगाल क्यों हो गया। गाँव के किसी समझदार बुजुर्ग से जब उसने इस प्रश्न का समाधान मांगा तो उसने समझाया, बेटे, अंधेरे में जाने का मतलब है, सूर्य निकलने से पहले दुकान पर पहुँचना और अंधेरे में लौटने का मतलब है, सूर्य छिपने के बाद दुकान से लौटना। ऐसा करके देख, तेरी बदहाली खुशहाली में बदल जाएगी। पुत्र ने ऐसा ही किया और कुछ ही दिनों में वह मालामाल हो गया।

बनावटी चढ़ावा

शिवरात्रि के संबंध में यही कहानी मनुष्यात्माओं पर भी लागू होती है। हमने भी शिवरात्रि के अर्थों का रूपांतरण कर दिया। सभी विकार मनुष्य के तन, मन, संबंध और संसार को कड़वेपन से भर देते हैं। ये विकार ज़हर समान हैं। भगवान ने इस जहर को अपने ऊपर अर्पित करवाया था लेकिन भोले भक्तों ने भीतर के ज़हर को तो अर्पित किया नहीं और प्रकृति के एक जहर जैसे कड़वे पौधे आक को शिवलिंग पर अर्पित करने लगे। इसी प्रकार भगवान ने कहा था कि जाति, कुल, धर्म, भाषा, पद, प्रतिष्ठा, रूप, धन, जवानी, विद्या आदि के सभी नशे अथवा अहंकार मेरे पर चढ़ा देना, यहाँ भी हम मनुष्य मात खा गये। भीतर के नशों को अर्पित करने की बजाय हमने प्रकृति की नशीली चीज़ें जैसे, भांग, धतूरे आदि को अर्पित करना शुरू कर दिया। जब हमारा चढ़ावा ही बनावटी है तो हमारी प्राप्तियाँ भी असत्य हो गई अर्थात् भंडारे भरपूर होने की बजाय खाली हो गए। जैसे, एक बार एक बूढ़ी सास ने अपनी बहू को कहा, बेटा, मेरे पाँव में बहुत दर्द होता है, कभी-कभी दबा दिया कर। बहू ने एक दिन पाँव को हाथ में लिया और एक फोटोग्राफर से फोटो खींचवा लिया। उसके बाद उस फोटो को सास के शयनकक्ष में लगा दिया और कहा कि जब-जब आपके पाँव में दर्द हो, आप समझ लेना कि मैं पाँव दबा रही हूँ। कुछ इसी प्रकार की भूल हमसे भी भगवान की भक्ति के संबंध

में हो गई। चढ़ावा तो बनावटी हो ही गया, साथ-साथ हमारी स्मृति भी बनावटी हो गई। भगवान ने कहा था, निरंतर अपना मन मुझमें लगाकर रखना, इससे मन शांत, स्थिर और शक्तिशाली हो जाएगा, हमने इस श्रीमत का भी रूपांतरण कर दिया। शिवपिंडी पर जल से भरा घड़ा लटका दिया, बूंद-बूंद जल शिवलिंग पर चढ़ता रहा और हम खुश हो गए कि मन भगवान पर अर्पित हो रहा है लेकिन वास्तव में मन तो सांसारिक झमेलों में उलझकर अशांत व अस्थिर ही रहा। इस प्रक्रिया से मन शक्तिशाली नहीं बन सका।

व्रत

भगवान का एक नाम निर्वैर है। वो निर्भय और निर्वैर है और उसने हम मनुष्यों को भी यही सिखाया कि कभी किसी मनुष्य से वैर नहीं रखना अर्थात् दिल के वैर-भाव को मुझ पर अर्पण कर देना तो तेरा जीवन खुशियों से भर जाएगा। हमने इस फरमान को भी नासमझी के कारण उलट दिया और वैर के स्थान पर बेर चढ़ाना प्रारंभ कर दिया। क्या नकली चीज़ें फायदा दे सकती हैं? क्या नकली दवाई से बीमारी ठीक हो सकती है? आजकल बाज़ार में बनावटी फल आते हैं और छोटी-छोटी प्लास्टिक की प्लेटें आती हैं जिनके ऊपर फलों के चित्र बने होते हैं। अगर किसी मेहमान के सम्मुख हम बनावटी फल या फलों के चित्र वाली प्लेट रख दें तो क्या वह प्रसन्न हो जाएगा, क्या वह हमें दुआ देगा? तो फिर अर्थ बदली हुई चीज़ें भगवान पर चढ़ाने से भगवान कैसे प्रसन्न हो सकते हैं? इसी प्रकार परमात्मा पिता ने मन की अनेक प्रकार की चंचल व विकृत वृत्तियों को नियंत्रित करने की श्रीमत दी थी। वृत्तियों के नियंत्रण का व्रत लेने की बात कही थी लेकिन हमने भोजन न खाने का व्रत ले लिया। द्वापर के प्रारंभ में इस व्रत में भी सात्विकता थी। भोजन न खाने के दो फायदे थे। एक तो, भूख लगने पर पेट को भोजन न मिलने से हठ के कारण ही सही भगवान की तरफ मन जाता था और दूसरा, अन्न से जो भारीपन या स्थूलता आ जाती है उसकी बजाय व्यक्ति हल्का रह सकता था। आज के युग में ये दोनों बातें पीछे रह गई हैं। अधिकतर साधक भूख के कारण ईश्वर के योगी नहीं लेकिन पेट के योगी बन जाते हैं। बार-बार ध्यान पेट की तरफ जाता कि आज भोजन नहीं किया और दूसरा, हल्का रहने की बजाय वे पेट को अन्न के अलावा अन्य कई तरह की चीज़ों से भर लेते हैं और उनके स्वाद का आनंद भी लेते हैं जिस कारण व्रत का असली उद्देश्य लगभग विस्मृत ही हो जाता है। ऐसे व्रत के आधार पर ना तो हम अपने विकारों को और ना ही अन्य विकृतियों को जीत पाते हैं। व्रत का अर्थ है विकारी वृत्ति का नियंत्रण या विकारी वृत्तियों को समाप्त करने का दृढ़ संकल्प। जब हम काम-क्रोध-लोभ की वृत्तियों को तथा ईर्ष्या, द्वेष जैसी दुर्भावनाओं को जीत लेते हैं तभी भगवान हम पर प्रसन्न होकर, हमारे भण्डारे भरपूर करते हैं।

जागरण

जब किसी व्यक्ति को किसी चीज का ज्ञान हो जाता है, तब ही कहा जाता है कि अब तक तो वह सोया हुआ था, अब जाग गया। नहीं तो बिना ज्ञान के केवल खुली आँखें रख लेने से जो रात्रि जागरण होता है, उससे क्या लाभ? रात को तो चोर, उचक्के और डाकू भी जागते हैं। बीमार, भूखे, चिंताग्रस्त लोग भी रात्रि जागरण करते हैं। मेहमानों के इंतज़ार में आवश्यक काम-धंधे निपटाने के लिए या शादी-ब्याह, जन्म आदि परिस्थितियों में भी रात्रि जागरण करना पड़ता है। सच्चा जागरण आँखें खोलने से नहीं बल्कि मन खोलने से होता है। जैसे राजा भतृहरि को जब संबंधों की असारता का ज्ञान हुआ तो उसने कहा, अब तक तो मैं सोया हुआ था, अब मेरी नींद खुली है। ऐसे जागरण के लिए आधार बनता है, ईश्वर का प्रेम और वैराग्य। ईश्वरीय प्रेम और वैराग्य के अभाव में यदि हम जागरण करते हैं तो उसमें कई बार स्थूल चीज़ों का सहारा लेना पड़ता है जैसे, चाय, शराब और अन्य नशे की चीज़ें। जागरण तो हो जाता है लेकिन मन सोया ही रहता है और फल प्राप्त नहीं होता। मन से जागे हुए व्यक्ति का चिंतन इस प्रकार हो जाता है – मैं एक शुद्ध आत्मा हूँ, मुझ आत्मा का पिता परमपिता परमात्मा शिव है, मैं इस सृष्टि रंगमंच पर मेहमान हूँ। शरीर रूपी वस्त्र धारण कर पार्ट बजाने आई हूँ, मेरा असली घर परमधाम है, विश्व की सर्व आत्माएँ परमात्मा की संतान होने के नाते मेरे भाई-

भाई हैं। मन के इस प्रकार जाग जाने से व्यक्ति विकर्मों से मुक्त हो जाता है, मुक्ति-जीवन्मुक्ति का अधिकारी बन जाता है, यही सच्चा जागरण है। द्वापर और कलियुग के 2500 वर्षों से भक्त लोग शिवरात्रि पर अज्ञानतावश नकली जागरण करते आ रहे हैं इसलिए शिवरात्रि मनाते हुए भी उनके सुख-शांति और धन के मटके खाली होते जा रहे हैं।

भक्तों की नादानी

एक बार एक आध्यात्मिक कार्यक्रम के बाद प्रसाद बंटने लगा तो एक बच्चे ने पचास रुपये का नकली नोट प्रसाद की थाली में डाल दिया और कहा, कुछ देकर ही तो प्रसाद लेना चाहिए। उपस्थित लोग उसके इस भोलेपन पर हँस पड़े। प्रसाद बांटने वाले ने कहा, कोई बात नहीं, आज नकली नोट चढ़ाएगा, तो कल असली चढ़ाने की आदत भी पड़ जाएगी। हमारी कहानी भी इस बच्चे की तरह ही है। हम भी भगवान पर नकली चीज़ें अर्पण करके शिवरात्रि मना लेने का दावा करते आ रहे हैं। भगवान शिव हमारी इस नादानी को देख-देख मुस्कराते हैं कि कोई बात नहीं, मेरा बच्चा अज्ञानतावश आज ऐसा कर रहा है, पर जब ज्ञान मिल जाएगा तो अवश्य यही असली चीज़ें भी मुझ पर अर्पण करेगा। अत: सभी भक्तों से हमारा नम्र निवेदन है कि शिवरात्रि के सच्चे आध्यात्मिक रहस्य को जान, वर्तमान समय सृष्टि पर अवतरित चेतन शिव को पहचान, उनसे नाता जोड़ें। जब तक शिव पिता धरती पर कर्त्तव्यरत हैं, तब तक का सारा समय ही सच्ची शिवरात्रि है। तो यादगार में एक दिन मनाने की बजाय, शिव को जानकर उनके सान्निध्य में हर पल ही सच्ची शिवरात्रि का आनन्द लें और 21 जन्मों के लिए कालकंटक दूर, भंडारे भरपूर का वरदान प्राप्त करें।

भण्डारे कैसे भरें?

कई विदेशी लोग प्रश्न उठाते हैं कि शिव की पूजा करते हुए भी भारत के भंडारे खाली हैं और हम विदेशियों के भंडारे भरपूर हैं। हम जानते हैं कि भौतिक संपदा कई बाहर के देशों में बहुत है भले ही वे शिवरात्रि नहीं मनाते। इसका कारण यह है कि भौतिक संपदा प्राप्त करने के लिए कुछ चारित्रिक व नैतिक मूल्य आवश्यक होते हैं जिनका वे पालन करते हैं। उदाहरण के लिए, समय की पाबंदी, कार्यकुशलता, कर्मठता, देश और देश की संपत्ति से प्रेम, स्वच्छता, बौद्धिक एकाग्रता, आविष्कार की प्रवृत्ति, विज्ञान के साधनों की उन्नति आदि-आदि। लेकिन उनके पास केवल भौतिक समृद्धि है, मानसिक शांति उनके पास भी नहीं है। यदि हम परमात्मा शिव द्वारा बताए गए तरीके से शिवरात्रि मनाएं तो हमारे धन-धान्य के भंडारे तो भरपूर होंगे ही, हम मानसिक शांति और स्थिरता को भी प्राप्त करेंगे। कई बार पूजा-पद्धति में भी वाममार्गीय प्रक्रिया अपना ली जाती है। कई लोग श्मशान घाट में जाकर शंकर देवता की मूर्ति रखकर अनेक प्रकार की तांत्रिक क्रियाएँ करते हैं और कई प्रकार की तामसिक ॠद्धि-सिद्धि प्राप्त करके किसी को गिराने, कष्ट देने या बदला निकालने का गलत कर्म भी करते हैं। पूजा में आई इस विकृति के कारण मनुष्य की स्वार्थपरता बढ़ती है। त्योहारों और उत्सवों को भी स्वार्थसिद्धि का आधार बना लेने के कारण मनुष्य अधिकाधिक पतित और कंगाल होता जाता है। अत: ऐसी वाममार्गीय प्रक्रियाओं, कर्मकाण्डों से सावधान रहने में ही हमारा कल्याण है।